रजि. नं. पी.बी./जे.एल–/0011/2012-14 RNI No. 26281/74

कृण्वन्तो ओ३म् विश्वमार्यम्

साप्ताहिक

आर्य मर्यादा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

वर्ष–74, अंक : 53, 31 मार्च-2 अप्रैल 2017 तदनुसार 20 चैत्र सम्वत् 2073 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

सब पशुओं की रक्षा

-ले० स्वामी वेदानन्द (दयानन्द) तीर्थ

ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति ये च भूतेषु जाग्रति।
पशून्ये सर्वान्रक्षन्ति ते न आत्मसु जाग्रति ते नः पशुषु जाग्रति।।
-अथर्व० १९।४८।५

शब्दार्थ-ये = जो **रात्रिम्** = रात्रि के समय **अनुतिष्ठन्ति** = अनुष्ठान करते हैं **च** = और **ये** = जो **भूतेषु** = भूतों के, पदार्थमात्र के विषय में **जाग्रति** = जागते हैं, सावधान रहते हैं, **ये** = जो **सर्वान्** = सभी **पशून्** = पशुओं की **रक्षन्ति** = रक्षा करते हैं, **ते** = वे ही **नः** = हमारे **पशुषु** = पशुओं में **जाग्रति** = जागते हैं, सावधान हैं।

व्याख्या-इस मन्त्र में कई उपदेश हैं-

(१) 'ये रात्रिमनुतिष्ठन्ति' = जो रात्रि को बनाते हैं अथवा जो रात्रि के समय अनुष्ठान करते हैं। श्लेषालङ्कार के द्वारा वेद ने दो बातें एक ही वाक्य में कह दी हैं। रात्रि का एक अर्थ रात और दूसरा अर्थ है रमणसामग्री ! जो रात्रि को = रमणसामग्री को बनाते हैं, अर्थात् जो संसार की सुख समृद्धि में वृद्धि के साधनों को प्रस्तुत करते हैं और 'जो रात्रि के समय अनुष्ठान करते हैं,' एकान्त समय में भगवान् की आराधना और धर्मार्थ का चिन्तन करते हैं। भाव यह कि मनुष्य का कर्त्तव्य है कि वह संसार को अधिक सुखी बनाने का निरन्तर यत्न करे तथा एकान्त समय में भगवद्भक्ति, आत्मचिन्तन, धर्मार्थ-विचार किया करें।

(२) 'ये च भूतेषु जाग्रति' = जो भूतों में जागते रहते हैं, अर्थात् जिन्हें पदार्थों के गुण-धर्मों का ज्ञान है। यह सारा संसार मनुष्य के लिए है, उसे यदि संसारस्थ पदार्थों के गुणों, धर्मों का ज्ञान न हो, तो वह उनसे उपयोग कैसे लेगा ? प्रत्येक पदार्थ से योग्य उपयोग लेने के लिए यह ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है।

(3) 'पशून् सर्वान् ये रक्षन्ति' = जो सभी पशुओं की रक्षा करते हैं। इस निर्देश पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पशुभक्षकों को इसका मनन करना चाहिए। रक्षा करनी है तो सभी रक्षा के अधिकारी हैं। अथर्ववेद [१९।५०।३] में कहा है- '**रात्रिरात्रिमरिष्यन्तस्तरेम तन्वा वयम्**' = हम किसी भी रात्रि में हिंसा न करते हुए इसी शरीर से तर जाएँ।

दूसरे शरीर की प्रतीक्षा न करनी पड़े, अतः इसी शरीर में अहिंसादि सद्गुणों का अनुष्ठान करें। इसी तत्त्व को सामने रखते हुए पूर्वोक्त बातों का गम्भीर आशय इस भाँति है-

(४) एकान्त समय में प्रभुभक्ति करनी चाहिए। उसके लिए (२) सब भूतों में सावधान रहना चाहिए, अर्थात्-'**यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवभूद्विजानतः। तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः**' [यजुः० ४०।७] = जिस समय ज्ञानी की दृष्टि में सभी प्राणी आत्मसमान हो गये, उस समय समदर्शी को क्या शोक ? और क्या मोह ? सबको अपने समान मानना चाहिए। उसका आचरण द्वारा प्रमाण देने के लिए (३) सब पशुओं की रक्षा करनी चाहिए, अर्थात् किसी की हिंसा नहीं करनी चाहिए। यज्ञप्रधान कहे जाने वाले यजुर्वेद के पहले मन्त्र में भी '**यजमानस्य पशून् पाहि**' [यजमान के पशुओं की रक्षा कर] प्रार्थना है। जो इन गुणों से सम्पन्न हैं, सचमुच वे सभी के आत्माओं में जागते हैं, वे उन्हें कोई पीड़ा नहीं देते। वे सभी के पशुओं के विषय में भी सावधान हैं। ऐसा नहीं कि अपनों की रक्षा और परायों की हिंसा। नहीं, सबकी रक्षा। अथर्ववेद [१७।१।४] में प्रार्थना है-'**प्रियः पशूनां भूयासम्**' = मैं पशुओं का प्यारा बनूँ। पशुओं का हिंसक उनका प्रिय कैसे बन सकता है।

(स्वाध्याय संदोह से साभार)

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा।

-व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

महामृत्युञ्जय-मन्त्रार्थविवेचनम्

ले०-पं० वेदप्रकाश शास्त्री, शास्त्री भवन, 4-E, कैलाशनगर, फाजिल्का, पंजाब

ओ३म् त्रयम्बकं यजामहे सुगन्धिम् पुष्टिवर्धनम्।

उर्वारुकमिव बन्धनात् मृत्योर् मुक्षीय माऽमृतात्।।

ऋ. 7/59/12 ; यजु. 3/60

शब्दार्थ-हम सभी (सुगन्धिम्) शुद्ध, उत्तमगन्ध, सम्बन्धयुक्त एवं ओजपूर्ण (पुष्टिवर्धनम्) शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक बलवर्धक ; जीवन का परिवर्धन, संवर्धन एवं पोषणकर्ता (त्र्यम्बकम्) ऋग्, यजु, साम मंत्रों द्वारा ज्ञान, कर्म, उपासना भक्ति का उपदेश करने वाले त्रिकालदर्शी, त्र्यम्बकदेव, सद्रूप जगदीश्वर की (यजामहे) समर्पित भाव से यजन एवं स्तुति करते हैं। (इव) जैसे (उर्वारुकम्) खरबूजा समयानुसार पूर्णरूपेण पक कर स्वत: ही (बन्धनात्) लता के सम्बन्ध से मुक्त हो जाता है, वैसे ही हम भी पूर्ण परिपक्व अवस्था को प्राप्त होकर (मृत्यो:) मृत्युमय से अथवा इस मरणधर्मा शरीर अर्थात् सांसारिक बन्धनरूप जन्म-मरण के चक्र से (मुक्षीय) मुक्त हो जाएं परन्तु (अमृतात्) मोक्षरूप अमृतसुख से (मा) कभी अलग न हों।

भगवान् ! जैसे खरबूजा लता में लगा हुआ अपने आप पक कर समय आने पर लता से मुक्त हो जाता है, वैसे ही हम सभी पूर्ण आयु को भोग कर शरीर से छूटकर मुक्ति को प्राप्त हों। परन्तु मोक्ष की प्राप्ति के लिए अनुष्ठान और परलोक की इच्छा से कभी भी अलग न हों।

ऋग्वेद एवं यजुर्वेद का यह विशिष्ट मन्त्र ''मृत्युञ्जय मन्त्र'' के नाम से प्रसिद्ध है। जिसका अर्थ है-मृत्यु को जीतने वाला। अनेक विद्वान् इसे ''महामृत्युञ्जय मन्त्र'' भी कहते हैं। परन्तु इतना तो स्पष्ट ही है कि यह मन्त्र मृत्यु पर विजय प्राप्ति हेतु प्रेरित करता है। आत्म विश्वास जगाता है। इसका अर्थ यह भी नहीं है कि मृत्यु होगी ही नहीं। मृत्यु तो अवश्य होगी क्योंकि संसार नश्वर है, अनित्य है, कुछ भी शाश्वत नहीं। जन्म लेने वाले की मृत्यु और मरे हुए का जन्म निश्चित है-

जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु: ध्रुवं जन्म मृत्यस्य च।। गीता 2/27

मृत्यु अवश्यंभावी है। बस हमें इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि मन्त्रानुसार आचरण करते हुए मृत्यु पूर्ण अवस्था भोग कर आनी है, पहले नहीं। वेद में मनुष्य की आयु सौ वर्ष वर्णित है-

जीवेम शरद: शतम्।।

यजु. 36/24

हम सौ वर्ष तक जीवित रहें।

भूयश्य शरद: शतात्।।

यजु. 36/24

सौ वर्ष से अधिक जीवित रहने पर भी हम भली-भांति स्वस्थ एवं आनन्दपूर्वक रहें। यह है पूर्ण आयु। वस्तुत: आहार व्यवहार, सदाचार आदि नियमों का पालन करते हुए जीवन व्यतीत करें तभी शतायु हो सकते हैं और हमारी प्रार्थना सार्थक और सफल कही जा सकती है।

अत: योगिराज श्री कृष्ण कहते हैं-

युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।

युक्तस्वप्नावबोधस्य युक्त-चेष्टस्य कर्मसु।

युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दु:खह।। गीता 6/17

दु:खों का नाश करने वाला योग तो यथायोग्य आहार और विहार करने वाले का तथा कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का और यथायोग्य शयन करने तथा जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

नियमबद्ध व्यक्ति का जीवन शतायु प्राप्त करने में अवश्य सफल हो सकता है।

मृत्युकाल अर्थात् प्रयाण के समय यदि इस संसार का साहचर्य, आकर्षण व्यक्ति को ईप्सित और लिप्सित कर रहा हो तो निश्चित ही व्यक्ति मृत्युलोक के तीव्र आकर्षणों, प्रलोभनों की रज्जू में बंध कर पुन: इहलोक में अंकुरित होगा अर्थात् जन्म लेगा। प्राणियों, सम्बन्धियों और पदार्थों की कामनाएं उसे बांधे रहेंगी। वह दिव्य लोकों की ओर गति नहीं कर सकेगा। अत: अन्तिम समय से पूर्व ही जब व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेष, आकर्षण, वासना, सांसारिक पदार्थों के प्रति लिप्सा एवं बन्धनों को काट देगा तभी वह मुक्ति की ओर अग्रसर हो सकेगा।

भगवान् श्री कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान्।

आत्मन्येवात्मना तुष्ट: स्थित-प्रज्ञस्तदोच्यते।। 2/55

हे अर्जुन ! जब मनुष्य मन में स्थित सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग देता है, उस समय आत्मा से आत्मा में सन्तुष्ट हुआ स्थिर बुद्धि वाला कहा जाता है।

दु:खेष्वनुद्विग्नमना: सुखेषु विगतस्पृह:।

वीतरागभयक्रोध: स्थितधी-र्मुनिरूच्यते।। 2/56

दु:खों के प्राप्त होने पर जिसका मन व्याकुल नहीं होता, सुखों की प्राप्ति होने पर जिसकी लालसा नहीं होती, जिसके भय, क्रोध, अनुराग नष्ट हो गए हैं, ऐसा मुनि स्थिरबुद्धि कहा जाता है।

ध्यायतो विषयान् पुंस: सङ्ग-स्तेषूपजायते।

सङ्गात् संजायते काम: कामात् क्रोधोऽभिजायते।। 2/62

विषयों का चिन्तन करने वाले पुरुष की उन विषयों में आसक्ति हो जाती है और आसक्ति से उन विषयों की कामना उत्पन्न होती है। कामना में विघ्न पड़ने से क्रोध उत्पन्न होता है।

क्रोधाद्भवति सम्मोह: सम्मोहात् स्मृतिविभ्रम:।

स्मृति भ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धि-नाशात् प्रणश्यति।। 2/63

क्रोध से अज्ञान उत्पन्न होता है और अज्ञान से स्मृति अर्थात् स्मरणशक्ति भ्रमित हो जाती है, स्मृति के भ्रमित हो जाने से बुद्धि का नाश हो जाता है, बुद्धि के नाश होने से मनुष्य अपने श्रेय साधन से गिर जाता है।

विहाय कामान् य: सर्वान् पुमांश्चरति नि: स्पृह:।

निर्ममो निरहंकार : स शान्तिमधिगच्छति।।2/71

जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओं को त्याग कर ममता अहंकार और लालसा रहित होकर वर्तता है, वह शान्ति को प्राप्त होता है।

वस्तुत: यह है मुक्ति की ओर अग्रसर होने की विधि। ऐसा व्यक्ति ही मृत्यु पर विजय प्राप्त कर अमृत की ओर कदम बढ़ायगा और कहेगा-''हे प्रभो !

मृत्योर्माऽमृतं गमय। मृत्यु से अमृत की ओर ले चलो।''

हे त्र्यम्बकरूप परमात्मन् देव ! खरबूजे के समान हमारा चैतन्य पिण्ड किसी भी वासना बेल, इच्छित कामनालता अथवा लिप्सा के आकर्षण सूत्र से बंधने न पाए। हमें ऐसा विज्ञान सामर्थ्य प्रदान कर कृतार्थ करें। आप हमारी योगसाधना के परिणाम स्वरूप हमें मृत्यु से मुक्त करके अमृतत्त्व की ओर उन्मुख करें।

योगसाधकों के लिए यह अत्यन्त सिद्ध मन्त्र है। इसे विधिवत् समझ कर शुद्ध साधना द्वारा स्वयं को उसी के अनुरूप रूपान्तरित करें।

यदि गम्भीरता पूर्वक विचार किया जाय तो प्रतीत होता है कि स्वाभाविक और उचित मृत्यु वही होती है जिसमें शरीर इस प्रकार सहज में ही छूट जाता है, जैसे पका हुआ फल डाल से टूट कर गिर जाता है। हम चाहते हैं कि हमारी मृत्यु ऐसी ही हो।

वस्तुत: पूरा पका हुआ फल अधिक से अधिक अपनी पुष्टि को प्राप्त कर चुका होता है, जो उसे वृक्ष से मिलनी चाहिए थी। साथ ही पकने पर उसमें मनोहर सुगन्ध भी आ जाती है। उस समय उसे अलग करने के लिए प्रयत्न नहीं करना पड़ा। वह अपने आप ही अलग हो जाता है। हम भी यही चाहते हैं कि इसी प्रकार हमारी स्वाभाविक मृत्यु हो। हे त्रिकालदर्शी रुद्ररूप भगवन् ! इसीलिए हम आपका यजन = स्तुति करते हैं।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

सम्पादकीय.....

रामनवमी का पर्व

मर्यादापुरूषोत्तम श्रीराम के जन्मोत्सव के रूप में चैत्र शुदि नवमी को सम्पूर्ण भारतवर्ष में हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है। मर्यादाओं का पालन करने वाले श्रीराम का आदर्श जीवन हिन्दु समाज में नई ऊर्जा का संचार करता है। रामनवमी का पर्व हमें मर्यादापुरूषोत्तम श्रीराम के आदर्श, त्याग और भाई के प्रति प्रेम, माता-पिता के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठा, मित्र के प्रति वचनबद्धता को याद दिलाता है। आज भी समाज में उनको मानने वाले अनुयायी इन गुणों को अपने जीवन में धारण कर लें तो समाज का कायाकल्प हो सकता है। आदर्श महापुरूषों के जीवन प्रकाश स्तम्भ का काम किया करते हैं केवल उनके लिए जो अन्धकारप्रिय न होकर प्रकाश से विद्या से, सत् ज्ञान से प्रेम करने वाले होते हैं और निरन्तर शुभ कर्मों का अनुष्ठान करते हैं। राम का जीवन हर दृष्टि से पूर्ण जीवन है। शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय उन्नति तथा उत्कर्ष का ढंग हम राम के जीवन चरित्र को पढकर तथा मनन कर सीख सकते हैं। सुख में दुख में, हर्ष और विषाद में, मान और अपमान में राम धृतिशील बने रहे। भगवान राम का जन्म इक्ष्वाकु कुल में राजा दशरथ के यहां हुआ था। राम अपने समय में अपनी गुण गरिमा से, आदर्श जीवन चरित्र से, उदार भावनाओं से समस्त अयोध्यावासियों के लिए एक सर्वोत्कृष्ट पथ प्रदर्शक सिद्ध हुए थे और इसी आधार पर वे मर्यादा पुरूषोत्तम विशेषण से सर्वत्र जगत् प्रसिद्ध हुए। भारतीय ऐतिहासिक परम्परा में प्राचीनतम लोक मर्यादा को सर्वथा अक्षुण्ण रखने में सूर्य कुल का उन्नायक, धर्म धुरन्धर, महापराक्रमी, नीति निपुण, सत्य प्रतिज्ञ, दृढव्रती, कार्यम वा साधयेयं देहं वा पातयेयम् के धनी भगवान राम का सम्पूर्ण जीवन अनुकरणीय है।

भगवान राम के गुणों के गुणों का वर्णन करते हुए बाल्मीकि ने बालकाण्ड और अयोध्याकाण्ड में जिस सुन्दरता से वर्णन किया है वह अनुपम है। समुद्र इव गाम्भीर्ये राम गम्भीरता में समुद्र के समान हैं। धैर्येण हिमवानिव अर्थात् धैर्य में पर्वतराज हिमालय के सदृश हैं। जिस प्रकार की प्रेरणा हमें मर्यादा पुरूषोत्तम राम के जीवन से मिलती है उतनी किसी अन्य के जीवन से नहीं। भगवान राम को आदि कवि ने आर्य उपाधि से विभूषित किया है- आर्यः सर्व समश्चैव सदैव प्रियदर्शनः। राम की एक और अभूतपूर्व विशेषता यह है कि- कदाचिदुपकारेणकृते नैकेन तुष्यति। न स्मरत्यपकाराणां शमप्यात्मवत्तया। अर्थात् वे लोगों के द्वारा किए गए एक ही उपकार से सन्तुष्ट हो जाते थे परन्तु सैकडों किए अपकारों को कभी भी स्मरण नहीं करते थे। महाकवि ने त्रेता युग के आदर्श युवक का कितना सुन्दर चरित्र प्रस्तुत किया है जो प्रत्येक मानव के लिए सर्वदा अनुकरणीय एवं उपादेय है। भारत के लोग भगवान राम की स्मृति में विजयदशमी के शुभ अवसर पर बहुत धनराशि व्यय करके राम लीला का आयोजन करते हैं किन्तु किसी भी गुणानुरागी सहृदय सज्जन ने उस महापुरूष के एक भी गुण का अनुकरण नहीं किया। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से नवरात्रों का आरम्भ होता है, इन दिनों में भी प्रायः नगर-नगर तथा ग्रामों में तुलसीकृत रामायण का अखण्ड पाठ किया जाता है। यह सब कीर्तन व पाठ केवल बाहरी आडम्बर है। राम की एक और अन्य विशेषता यह भी है जिस प्रकार सूर्य उदय एवं अस्त के समय एक ही वर्ण का रहता है उसे कोई हर्ष, दुःख अथवा उद्वेग नहीं होता, उसी प्रकार महापुरूष भी दुख में सुख में समान रहते हैं।

भारतीय आदर्शों का पूर्ण परिपाक हमें मर्यादा पुरूषोत्तम राम में देखने को मिलता है। मानव जीवन को सम्पूर्ण एवं सर्वांगीण बनाने में जिन गुणों की आवश्यकता होती है, वे सभी गुण हमें राम के जीवन में दिखाई देते हैं। वस्तुतः श्री राम ने अपने गुण, कर्म एवं स्वभाव से मानव की परिपूर्ण छवि हमारे सामने प्रस्तुत की है। प्रजा की प्रसन्नता के लिए वे बड़े से बड़ा त्याग करने को भी तैयार रहते थे। अन्याय और अत्याचार का प्रतिकार करने के लिए वे सदा आगे रहते थे। अत्यन्त सौम्य और मृदु स्वभाव वाले राम अवसर आने पर अत्यन्त कठोर भी बन जाते हैं। उत्तररामचरित के रचयिता भवभूति के शब्दों में-

वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि

वज्र से भी कठोर तथा पुष्प से भी कोमल राम का लोकोत्तर चरित्र समझना सामान्य बुद्धि के व्यक्ति के लिए सम्भव ही नहीं है। जीवन के आरम्भिक काल में हम उन्हें माता-पिता, गुरू आदि पूजनीय व्यक्तियों की आज्ञा पालन में तत्पर देखते हैं। कर्त्तव्य पालन में उनकी तुलना किसी अन्य से नहीं की जा सकती। जनकपुरी में शिव धनुष भंग के समय उनकी शक्तिमत्ता, धैर्य, गाभीर्य का परिचय मिलता है। माता-पिता की आज्ञा का पालन उन्हें अत्यन्त प्रिय था। इसलिए वे राज्याभिषेक के आनन्दजन्य अवसर को छोड़ कर वनवास के लिए प्रस्थान करते हैं। राज्याभिषेक के लिए बुलाए जाने और थोड़ी देर के बाद वनवास के आदेश मिलने पर भी राम की मुखाकृति में थोड़ा भी विकार नहीं आया। सुख-दुख, हानि-लाभ तथा निन्दा स्तुति में समत्व बुद्धि रखने वाले ऐसे महापुरूषों को ही स्थितप्रज्ञ कहा जाता है। भारतीय परिवार के आदर्शों को रामायण के पात्रों में जीवन्त रूप से देखा जा सकता है। यहां भी राम ही अन्य पात्रों में आदर्श मर्यादा तथा कर्त्तव्य पालन का भाव जागृत करने में दत्तचित्त दिखाई देते हैं। अपने भाईयों के लिए उनका स्नेह और वात्सल्य समय-समय पर प्रकट होता है। सीता के प्रति उनका अनन्य प्रेम और अनुराग एक आदर्श पति की मर्यादा स्थापित कर एक पत्नीव्रत की गरिमा प्रतिष्ठित करता है। इसी प्रकार गुरू-शिष्य सम्बन्ध, स्वामी सेवक सम्बन्ध, मित्रों का पारस्परिक सौहार्द भाव, यहां तक कि शत्रु के प्रति भी न्यायपूर्ण आचरण का दृष्टान्त राम के चरित्र में दृष्टिगोचर होता है। महर्षि बाल्मीकि ने राम के इसी सर्वगुणान्वित चरित्र को ध्यान में रखकर उन्हें धर्म का विग्रहवान् रूप कहा है।

मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम का जन्मदिवस सम्पूर्ण मानव जाति के लिए प्रेरणादायक और आदर्श के रूप में है। रामनवमी के पर्व को मनाना उनके गुणों को जीवन में धारण करने का संकल्प लेने का पर्व है। श्री राम एक आदर्श पुत्र थे, एक आदर्श भाई थे, एक आदर्श पति थे, आदर्श शिष्य थे। ऐसे ओजस्वी, तेजस्वी, चरित्रनायक श्री राम का जन्मदिवस मनाते हुए हम भी उनकी तरह आदर्श गुणों को अपने जीवन के अन्दर धारण करें। श्रीराम के गुणों को जीवन में धारण करने से ही समाज से बुराईयों को दूर किया जा सकता है। इसलिए 5 अप्रैल को रामनवमी का पर्व मनाते हुए मर्यादापुरूषोत्तम श्रीराम के गुणों का चिन्तन करें और उन्हें अपने जीवन में धारण करने का संकल्प लें।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

यज्ञीय बन प्राणायाम पूर्वक प्रभु अर्चन करें

-डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१० गाजियाबाद उ. प्र. भारत चलभाष ०९३५४७४५९२६

हम अपने जीवन को यज्ञमय बनाकर परोपकार में लगावें। ऐसे पवित्र जीवन वाले बनकर हम प्राण-साधना अर्थात् प्राणायाम पूर्वक उस पिता का अर्चन करें, स्मरण करें। इस प्रकार हम प्रभु के सहस से उठकर सहस्वान बनें। इस बात की ओर ही यह मन्त्र इस प्रकार संकेत कर रहा है:

अनवद्यैरभिद्युभिर्मख: सहस्वदर्चति।

गणौरिन्द्रस्यकाम्यै।। ऋ. १.६.८।।

इस मन्त्र में पांच बातों पर चर्चा करते हुए कहा गया है कि :

१. प्रभु के उपासक में साहस की उत्पत्ति

प्रभु की उपासना करने वाला उस पिता का उपासक सदा गतिशील होता है। इतना ही नहीं यह उपासक कर्मशील भी होता है। वह निरन्तर गतिमान बने हुए कर्म करता है तथा ऐसा पुरुष मरुतों के साथ, मरुतों के सहाय से उस पिता की सबल अर्थात् पूर्ण बल से, पूर्ण शक्ति से अर्चना करता है। प्रभु अर्चना की पहचान क्या है ? प्रभु अर्चना की तो पहचान यह ही है कि उसके उपासक में, उसके भक्त में ''साहस'' उत्पन्न हुआ या नहीं। साहस की उत्पत्ति ही तो उसकी पहचान है। प्रभु सहोअसि हैं, वह पिता साहस के पुन्ज हैं। उनके पास साहस का अपरिमित भण्डार है। जब एक उपासक उस सहस के भण्डारी की उपासना करता है तो उस में भी उस पिता के गुण आने लगते हैं। जो उस पिता का उपासक होता है, उस में उस पिता के गुणों का आधान होना ही होता है। इस कारण उपासक में साहस की उत्पति निश्चित रुप से होनी ही चाहिए।

२. प्रभु प्रार्थना से शरीर पवित्र कर इंद्र बनें

जिन प्राणों की साधना से अथवा यूं कहें कि जिस प्रणायाम के द्वारा अपने शरीर को पवित्र कर इस साधना पूर्वक इन्द्र प्रभु की अर्चना करता है (इन्द्र क्या है?) अपने आप को किसी विशेष कर्म में सर्वज्ञ बनाना, पूर्ण निपुण करना ही इन्द्र है, किसी कर्म में पारंगत व्यक्ति को उस विषय का, उस कर्म का इन्द्र कह सकते हैं। जब एक व्यक्ति अपरिमित साधना से, पूर्ण साधना से अपने विषय की विशेषज्ञता, मर्मज्ञता पा लेता है तो उसे उस विषय का इन्द्र कहा जा सकता है) ऐसे व्यक्ति के प्राण, ऐसे व्यक्ति के श्वास से वासनाओं का नाश हो जाता है, यह व्यक्ति वासनाओं से रहित हो जाता है। इसका ही परिणाम होता है कि मानव जीवन पाप रहित हो जाता है, इस के जीवन में पाप नहीं होते। वासनाएं पाप का कारण होती है जब उसमें वासना ही नहीं है तो पाप कौन करेगा ? अर्थात् पाप होंगे ही नहीं।

३. ज्ञान के प्रकाश से वासनाओं से बचें

यह प्राण अर्थात् प्राणायाम से मानव उर्ध्वरेता होता है। भाव यह है कि प्राण साधना से मानव उपर की ओर, आकाश की ओर जाता है क्योंकि यह प्राण उसे आकाश की ओर ले जाने वाले होते हैं। यह तो वासना विनाश का एक स्वाभाविक कारण होता है। वासना की यह एक स्वाभाविक गति है कि वासना मानव के विनाश का कारण होती है तथा प्राण साधना वासना के विनाश का कारण होती है। जो व्यक्ति प्राण साधना पूर्वक वासनाओं का विनाश करने में सफल हो जाता है तो वह इतना उपर उठ जाता है कि अब उसके यह प्राण उसे आकाश की ओर ले जाने के योग्य बन जाते हैं। वासना को वृत्र भी कहते हैं, जिसका भाव पर्दे से होता है। इस कारण हम कह सकते हैं कि वासना एक परदे के समान होती है। जब तक हमारी आंखों पर वासना रुपी पर्दा पड़ा हुआ है, तब तक हम किसी भी प्रकार का प्रकाश नहीं देख सकते। ज्यों ही हम प्राण साधना की सहायता से इस वासनाओं के परदे हो हटाने में सफ़ल हो जाते हैं त्यों ही ज्ञान का प्रकाश हमारे अन्दर प्रवेश करता है, ज्ञान का प्रकाश हमें दिखाई देता है।

४. परमात्मा से मिलने

प्राण को गण भी कहते हैं क्यों? क्योंकि प्राण कभी एक नहीं होता। हम जो श्वासें लेते हैं इन्हें ही प्राण कहा जाता है, हम जो जीवित हैं, इन प्राणों के ही कारण हैं। श्वास निरन्तर चलते हैं, इस कारण यह एक हो ही नहीं सकते यह अनेक होने के कारण इन्हें यहां गण कहा गया है। अत: हमारे यह प्राण गण हैं, अनेक हैं। यह संख्यान के योग्य हैं। इनकी संख्या होती है। संख्या उस की ही हो सकती है, जो एक से अधिक हो। अत: यह प्राण संख्या में आने वाले होते हैं। संख्यान के योग्य होने से ही हमारे यह प्राण प्रशंसनीय भी होते हैं। इस कारण ही यह प्राण जीवात्मा को चाहने वाले भी होते हैं। जब तक प्राण चलते हैं, तब तक ही उनका जीवात्मा से मेल बना रह सकता है। इसलिए प्राण जीवात्मा को चाहने वाले होते हैं।

कौन से प्राण चाहने के योग्य होते हैं ?

वह प्राण जो मनुष्य को उत्तम जीवन वाला बनाने में सहायक हों। जो प्राण मनुष्य को उत्तम जीवन वाला न बना सकें उन प्राणों का क्या उपयोग है। इस कारण ही तो कहा जाता है कि मनुष्य प्रतिदिन शुभ मुहुर्त से उठ कर बाहर भ्रमण को जावे किसी नदी के तट पर या किसी बगीचे में जा कर आसन प्राणायाम करे, प्राण साधना करे ताकि उस के अन्दर शुद्ध आक्सीजन से युक्त प्राण वायु प्रवेश करे। ऐसी उत्तम वायु के प्राण के प्रवेश से वह उत्तम जीवन वाला बनता है, स्वस्थ शरीर वाला बनता है। अत: यह शुद्ध प्राण ही उसे उत्तम जीवन वाला बनाने में सहायक होते हैं। ऐसे उत्तम जीवन वाला होने से ही वह उत्कर्ष की ओर, उन्नति की ओर जाने वाला बनता है। इस प्रकार निरन्तर ऊपर उठते हुए वह परमात्मा से मिलने का कारण भी बनते हैं।

५. यज्ञरुप बन

इस प्रकार जो व्यक्ति प्राण की साधनापूर्वक अपना जीवन चलाता है, ऐसा व्यक्ति पवित्र कर्मों वाला होता है, ऐसे व्यक्ति के किये गए कर्म सदा पवित्र ही होते है। ऐसा होते हुए वह यज्ञशील होता है अर्थात् वह प्रतिदिन तथा प्रतिक्षण अनेक प्रकार के यज्ञों को करता रहता है। प्रात: सायं तो हवन के रुप में यज्ञ करता ही है, इस के साथ ही दिन भर के कर्मों में भी यज्ञीय भावना को बनाये रखता है। दूसरों की सहायता रुप परोपकार के कार्य करते हुए यज्ञ ही करता रहता है। इस प्रकार वह व्यक्ति यज्ञ का ही रुप बन जाता है।

नव संवत्सर पर ओ३म् का ध्वजारोहण

आर्य समाज, स्वामी दयानन्द मार्ग, अलवर में आज दिनांक 28 मार्च 2017, मंगलवार को प्रात: 8.00 बजे यज्ञ से आर्य समाज की स्थापना दिवस का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। यज्ञ उपरान्त नव संवत् 2074 के उपलक्ष्य में ओ३म् का ध्वजारोहण किया गया।

विद्यालयी छात्राओं द्वारा ''जयती ओ३म् ध्वज व्योम बिहारी'' मंगलगान से आर्य समाज स्वामी दयानन्द में ओ३म् का ध्वज फैराया गया।

कार्यक्रम में श्री अमर मुनि ने नव संवत्सर पर प्रकाश डालते हुए कहा कि चैत्र मास के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को परमेश्वर ने सृष्टि निर्माण किया था, इसलिए इस पावन तिथि को नव संवत्सर पर्व के रूप में भी मनाया जाता है।

इस अवसर पर सर्वश्री अशोक कुमार आर्य, प्रदीप कुमार आर्य, श्रीमती कमला शर्मा, बृजेन्द्र देव आर्य, सुरेन्द्र सक्सैना, डॉ. राजेन्द्र कुमार आर्य, सत्यपाल आर्य, शिव कुमार कौशिक, रघुवीर आर्य, ईश्वर देवी, सुमन आर्य एवं गणमान्य जन आदि उपस्थित थे।

-प्रदीप कुमार आर्य

ईश्वर शक्ति की महिमा—अथर्ववेद

-ले० शिव नारायण उपाध्याय-कोटा

ईश्वर को सर्व शक्तिमान माना जाता है। अथर्व वेद काण्ड 10 सूक्त 10 में ईश्वर शक्ति की महिमा का वर्णन 34 मंत्रों द्वारा किया गया है। यहां हम पाठकों के लिए उनमें से 11 मंत्रों के द्वारा ईश्वर शक्ति की महिमा का वर्णन कर रहे हैं।

नमस्ते जाद्यमानायौ जाताया उत ते नमः।

बालेभ्यः शफेभ्यो रूपायाघ्न्ये ते नमः।।1।।

अर्थ-(ते) तुझ (जायमानायै) प्रकट होती हुई को (नमः) नमस्कार (उत) और (ते जाताये) तुझ प्रकट हो चुकी को (नमः) नमस्कार है। (अघ्न्ये) हे न मारने वाली (ईश्वर शक्ति) (बालेभ्यः) बलों के लिये और (शफेभ्यः) शान्ति व्यवहारों के लिए (ते) तेरे (रूपाय) स्वरूप को (नमः) नमस्कार है।

भावार्थ-परमेश्वर की जिस महिमा को विद्वान् लोग जान गए हैं और जिस महिमा को अब जान रहे हैं। उन्हें जानकर वे अपने बल और बुद्धि को बढ़ा कर परमेश्वर को सदा नमस्कार करते हैं।

यो विद्यात् सप्त प्रवतः सप्त विद्यात् परावतः।

शिरो यज्ञस्य यो विद्यात् स वशां प्रति गृह्णीयात्।।2।।

अर्थ-(यः) जो विद्वान् (सप्त) सात (दो हाथ, दो पांव, एक पायु एक उपस्थ, एक उदर) (प्रवतः) उत्तम गति वाले लोगों को (विद्यात्) जाने और (सप्त) सात (2 कान, 2 नथने, 2 आंखे और 1 मुख) (परावतः) यज्ञ (श्रेष्ठ कर्म) के (शिरः) शिर (प्रधान अपनी आत्मा) को (विद्यात्) जान लेवे (सः) वह पुरूष (वशाम् कामना योग्य ईश्वर शक्ति को (प्रति) प्रतीति से (गृह्णीयात्) ग्रहण करे।

भावार्थ-जो मनुष्य अपने सात शरीर के नीचे और सात ऊपर के चौदह लोकों को अर्थात् इन्द्रियों की अद्भुत शक्तियों को अपनी आत्मा से सम्बन्ध सहित जान लेते हैं वही पुरूष ईश्वर की शक्ति को साक्षात् करके अपनी शक्ति को बढ़ावे।

यया द्यौर्यया पृथिवी ययापो गुपिता इमाः।

वशांसहस्त्रधारां ब्रह्मणाच्छा-वदामसि।।4।।

अर्थ-(यया) जिस शक्ति द्वारा (द्यौः) सूर्य (यया) जिसके द्वारा (पृथिवी) पृथ्वी और (यया) जिस शक्ति द्वारा (इमाः) यह पदार्थों को धारण करने वाली (वशाम्) उस वशा (कामना योग्य परमेश्वर शक्ति) को (ब्रह्मणा) वेद द्वारा (अच्छावदामसि) हम आदर से बुलाते हैं।

शतं कंसाः शतं दोग्धारः शतं गोप्तारो अधि पृष्ठे अस्याः।

ये देवास्तस्यां प्राणन्ति ते वशां विदुरेकधाः।।5।।

अर्थ-(शतम्) सौ (कंसाः) कामना करने वाले (शतम्) सौ (दोग्धारः) दोहने वाले (शतम्) सौ (गोप्तारः) रक्षा करने वाले (पुरुष) (अस्या) इस शक्ति की (पृष्ठै) पीठ कर (सहारे में) (अधि) अधिकार पूर्वक हैं। और (ये) जो (देवाः) विद्वान् लोग (तस्याम्) उस शक्ति में (प्राणन्ति) जीवन यापन करते हैं (ते) वे लोग (वशाम्) कामना करने योग्य ईश्वर शक्ति को (एकधा) एक प्रकार से (सत्य रीति से) (विदुः) जानते हैं। भावार्थ-जो मनुष्य कामना करने योग्य परमेश्वर की शक्ति की खोज कर शरण लेते हैं वे पुरूषार्थी होकर सत्य ज्ञान हो प्राप्त करते हैं।

अनुत्वाग्निः प्रविशदनु सोमो वशेत्वा।

ऊधस्ते भद्रे पर्जन्यो विद्युतस्ते स्तना वशे।।7।।

अर्थ-(वशे) हे वशा (कामना योग्य ईश्वर शक्ति) (त्वा अनु) तेरे पीछे-पीछे (अग्निः) अग्नि ने (पदार्थों में) (त्वा अनु) तेरे पीछे-पीछे (सोमः) प्रेरणा करने वाले जीवात्मक ने (शरीर में) (प्र अविशत्) प्रवेश किया है। (भद्रे) हे कल्याणी। (वशे) वश। (पर्जन्यः) मेघ (ते) तेरा (ऊधः) मेड़ और (विद्युतः) बिजली (ते) तेरे (स्तनाः) स्तन के समान है।

अपस्त्वं धुक्षे प्रथमा उर्वरा अपराः वशे।

तृतीयं राष्ट्रं धुक्षेऽन्नं वशे त्वं।।8।।

अर्थ-(वशे) हे वशा। (त्वम्) तू (प्रथमाः) प्रधान और (अपराः) अप्रधान (अपः) प्रजाओं को (उर्वराः) उपजाऊ भूमियों में (धुक्षे) भरपूर करती है। (वसे हे वशा (त्वम्) तू (अन्नम्) अन्न (क्षीरम्) जल और (तृतीयम्) तीसरे (राष्ट्रम्) राज्य से संसार को (धुक्षे) भरपूर करती है।

यत् ते क्रुद्धो धनपतिरा क्षीरमहरद् वशे।

इदं तदद्य नाकस्त्रिषु पात्रेषु रक्षति।।11।।

अर्थ-(वशे) हे वशा। (कामना योग्य ईश्वर शक्ति) (यत्) जब (क्रुद्धः) क्रुद्ध (धनपत्तिः) धनों के स्वामी (परमेश्वर) ने (ते) तेरे लिए (क्षीरम्) जल को (आ अहरत) (दुष्टजन से) से लिया। (तत्) तब (इदम्) जल को (अद्य) आज (नाकः) क्लेश शून्य (आनन्द स्वरूप परमात्मा) (त्रिषु) तीन (ऊँचे, नीचे, मध्य) (पात्रेषु) रक्षा के आधार लोकों में (रक्षिति) रक्षित रखता है।

भावार्थ-परमात्मा की शक्ति की महिमा को अस्वीकार करने वाले पुरूष को परमात्मा कुद्ध होकर निर्बल कर देता है और उत्पत्ति के साधनों को ऊपर, नीचे और मध्य लोकों में विभाजित कर देता है।

सं हि सोमेनागत समु सर्वेण पद्वता।

वशा समुद्रमध्यष्ठात् गन्धर्वैः कलिभिः सह।।13।।

अर्थ-(वशा) वशा (हि) ही (सोमेन) ऐश्वर्य के साथ (उ) और (सर्वेण) प्रत्येक (पद्वता) पांव के साथ (सम् सम् अगत्) निरन्तर संयुक्त हुई है। (गन्धर्वैः) पृथ्वी को धारण करने वाले और (कलिभिः) गणना करने वाले (गुणों के सहः) साथ (समुद्रम्) अन्तरिक्ष की (अधि अस्थात्) अधिष्ठायी हुई है।

सं हि सूर्येणागत समु सर्वेण चक्षुषा।

वशा समुद्रमत्यख्द् भद्रा ज्योतीषि बिभ्रती।।5।।

अर्थ-(भद्रा) उत्तम ज्योतियों को (बिभ्रति) रखती हुई (वशा) वशा (कामना योग्य ईश्वर शक्ति) (हि) ही (सूर्येण) सूर्य के साथ (उ) और (सर्वेण) प्रत्येक (चक्षुषा) दृष्टि के साथ (सम् सम् अगत) निरन्तर मिला है और उसने (समुद्रम्) अन्तरिक्ष को (अति) अत्यन्त करके (अख्यत्) प्रकाशित किया है। भावार्थ-ईश्वर की शक्ति से ही सूर्य में और सूर्य से आंखों में प्रकाश पहुंचाता है।

वशागमाता राजन्यस्य वशा माता स्वधे तव।

वशाया यज्ञ आयुधं ततश्चित्तमजायत।।8।।

अर्थ-(वशा) वशा (राजन्यस्य) शासक की (माता) माता (निर्मात्री) और (स्वधे) हे अन्न। (वशा) वशा (तव) तेरी (माता) जननी है। (यज्ञे) यज्ञ (श्रेष्ठ कर्म) में (वशायाः) वशा का (आयुधम्) जीवन धारण कर्म है। (ततः) उससे (चित्तम्) चित्त (अजायत) उत्पन्न हुआ है।

भावार्थ-ईश्वर शक्ति से ही शासन शक्ति, अन्न प्राप्ति और जीवन धारण है।

वशां देवा उप जीवन्ति वशां मनुष्यां उत्।

वशेदं सर्वमभवद् यावत् सूर्यो विपश्यति।।34।।

अर्थ-(देवाः) देव (वशाम्) वशा के (उत) और (मनुष्या) मनुष्य (वशाम्) वशा के (उप जीवन्ति) आधार से जीते हैं। (वशाः) वशा इस सब में (अभवत्) व्यापक हुई है, (यावत्) जितना कुछ (सूर्यः) सूर्य (सर्व प्रेरक परमात्मा) (विपश्यति) विविध प्रकार देखता है।

इस प्रकार हमने संक्षेप में ईश्वर शक्ति की महिमा को वेद के आधार पर जानने का प्रयत्न किया है। इतिशम्।

योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः

-ले० अभिमन्यु कुमार खुल्लर 22, नगर निगम स्वार्टर्स, जीवाजीगंज, लश्कर, ग्वालियर-474001 (म. प्र.)

संध्योपासना के मंत्रों के चयन में अथर्ववेद के छैः मंत्रों का चयन किया गया है। इन मंत्रों का शीर्षक 'मनसा परिक्रमा' दिया गया है। प्रत्येक मंत्र की अंतिम शब्दावली- **योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः** है। अर्थ है-मन में इन मंत्रों की परिक्रमा कीजिये और द्वेष वाले दुर्गुण के पराभव की एक बार नहीं छैः बार प्रार्थना कीजिये। साधक को वचनबद्ध किया गया है। श्रेय मार्ग के पथिक के लिये काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर छैः शत्रु बताए गए हैं। मत्सर इनमें अंतिम शत्रु है। परन्तु जान पड़ता है, अथर्ववेद इन पांच शत्रुओं से भी इस शत्रु-मत्सर को सर्वोपरि रखता है। कारण समझना होगा। मस्तिष्क में यह बात स्तुति, प्रार्थना और उपासना मंत्रों के गहन आलोड़न में उठी और बलवति होती चली गई।

मंत्र की अंतिम पदावली का सरल, सीधी सपाट भाषा में अर्थ है कि जो व्यक्ति हमसे द्वेष करता है अथवा जिससे हम द्वेष करते है, उसे परमात्मा के न्यायरूपी जबड़े (सामर्थ्य) में रखते हैं। जबड़ा शब्द महत्वपूर्ण है। दांत से चबाने पर अन्न का कुछ अंश, बिना चबे भी उदरस्थ हो जाता है पर जबड़े से चबाने पर, चूर-चूर होकर ही आगे पहुंचता है। इसी प्रकार परमेश्वर के न्याय के समक्ष, किसी के बच जाने की, पतली गली से निकल जाने की गुंजाइश ही नहीं है चाहे वह कितना ही सामर्थ्यवान, विद्वान व संन्यासी क्यों न हो ? प्रश्न उठता है कि क्या महर्षि स्वयं भी, अपने आपको इस वचनबद्धता में सम्मिलित करते हैं या केवल आराधकों के लिये ही इन मंत्रों का संकलन किया है? वे लोग भूल करेंगे जो यह मानेंगे कि महर्षि इस वचनबद्धता में अपने को सम्मिलित नहीं करते हैं। '**दुरितानि**' के पराभव की प्रार्थना में और **जुहुराणम व एनः से**-पाप से बचाने की प्रार्थना में महर्षि स्वयं को सम्मिलित करते हैं। स्तुति प्रार्थना और उपासना के मंत्रों में उनकी भागीदारी हमारी, आपकी तरह ही है। महर्षि यह विस्मरण कर ही नहीं सकते थे कि वह अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्यवान जीवात्मा है। सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान केवल परमात्मा ही है।

रामकृष्ण परमहंस ने महर्षि दयानन्द से प्रश्न किया कि क्या वे ईश्वरोपासना करते है ? महर्षि का उत्तर हाँ में सुन कर पुनः पूछा क्यों करते हो ? महर्षि ने उत्तर दिया कि स्वयं को माँजने के लिये। परमहंस ने कहा जो स्वयं स्वर्णपात्र हो ? महर्षि मौन हो गए। समझ गए-यह '**अहम् ब्रह्मास्मि**' का भ्रम पाले हुए है। वार्तालाप समाप्त।

जिस व्यक्ति के प्राण हरण की सत्रह बार चेष्टा की गई हो, जिसे सीधे ब्रह्मचर्य आश्रम से संन्यासाश्रम की चौथी सीढ़ी पर पहुंचा हुआ संन्यासी होने के कारण सन्ध्योपासना अनिवार्य नहीं है, वही व्यक्ति अपने आपको प्रतिदिन मांजता है मनसा परिक्रमा करके **योऽस्मान् द्वेष्टि यं, वयं, द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।** श्रेयमार्ग में अवरोध उत्पन्न करने वाले छैः शत्रुओं काम, क्रोध, लोभ मोह, मद और मत्सर में से प्रथम पाँच पर तो महर्षि विजय प्राप्त कर चुके थे। छठे शत्रु **मत्सर**-द्वेष के बारे में सोच विचार करने का, अंतिम निर्णय करने, निश्चयात्मक रूप से कहने का अधिकार, जीवात्मा के पास नहीं है। जानबूझ कर किये गये द्वेष को जीवात्मा जान सकता है, पर अज्ञात रूप से किये गये द्वेष को तो परमात्मा ही जानता है क्योंकि द्वेष का आयाम बहुत विशाल है अथर्ववेद में ही जब इस दुर्गुण ग्रस्त मानव के हो जाने की पूरी-पूरी सम्भावना व्यक्त की गयी है तभी तो उसके निवारणार्थ परमात्मा की न्याय व्यवस्था में अपने आपको को सौंपना ही उपाय बताया है कोई विकल्प जीवात्मा के पास नहीं है। महर्षि दयानन्द इसीलिए अपने आपको प्रतिदिन परमात्मा के न्यायरूपी सामर्थ्य-जबड़े में रखते थे।

काशी शास्त्रार्थ 1869 से लेकर 1883 अंतिम विष प्रयोग तक महर्षि दयानन्द के 17 बार प्राण हरण के प्रयास किए गए। महर्षि बारम्बार अपने आपसे पूछते होंगे-ईश्वर के सच्चे स्वरूप को बता कर, उसकी स्तुति, प्रार्थना और उपासना की वेद सम्मत विधि बता कर, अंध विश्वासों, धर्म ढ़कोसलों का पर्दा-फाश कर, क्या कोई बुरा काम कर रहे हैं, जिसके लिये निरन्तर उनके प्राण हरण की चेष्ठा की जा रही है। दूसरा विचार तत्काल कौंधा होगा। नहीं, मैं कुछ अपराध किसी के प्रति नहीं कर रहा हूं। मैं तो गुरू विरजानन्द जी महाराज के बताए और उस सम्बन्ध में पूर्णतया आश्वस्त होने पर ही सत्य मत, सत्य धर्म वेद का प्रचार, जन कल्याण की भावना से कर रहा हूं फिर क्यों मुझे, मेरे शरीर को, समाप्त करने के निरन्तर प्रयास किए जा रहे हैं ? सम्भवतः इसलिये कि ईश्वर की अवधारणा, निराकार, सर्वव्यापक ईश्वर का प्रचार प्रसार सफल होने पर उनकी मौज-मस्ती, हलुए-मांड़े की आजन्म व्यवस्था, भोली भाली जनता के मन-मस्तिष्क पर अधिकार की अदम्य कामना पर चोट पहुँचेंगी। पूजा-पाठ की यथाविधि रखनी होगी-काशी नरेश ईश्वरनारायण सिंह जी को भी धर्मधुरीणों ने समझा कर पूर्णतः आश्वस्त कर दिया था। शास्त्रार्थ में दयानन्द की पराजय के बिना धर्म नहीं बचेगा।

महर्षि की सोच को विराम मिला। स्वार्थी और नासमझ वे लोग हैं जो घोर स्वार्थवश उनके प्राण हरण की चेष्टा कर रहे हैं। नासमझों पर क्या क्रोध ? उनसे कैसा द्वेष ? ऋषित्व की ओर अग्रसर होते हुए स्वामी दयानन्द सरस्वती यही सोच कर अपने आपको संतोष दे लेते होंगे। फिर भी मन के किसी अज्ञात कोने में, पूर्व जन्मों के संस्कार वश, पड़ी हुई धूल झाड़ कर, मांज भी लेते थे। यह कार्य अंतिम समय तक चला। पं. भीमसेन प्रमुख लेखक जो महर्षि की संस्कृत व्याख्या को हिन्दी में अनुवाद करते थे, लिखा है अंतिम समय से कुछ पूर्व तक महर्षि दयानन्द अग्ने नये सुपथा मंत्र का पाठ करते थे।

अब आइए सामान्य मानवों के संसार में-मत्सर शब्द संस्कृत भाषा का है। हिन्दी शब्द कोष में इसके अर्थ-किसी का वैभव या सुख न देख सकना, ईर्ष्या, डाह जलन, क्रोध दिए हैं। ईर्ष्या, डाह, जलन और क्रोध यदि समानार्थी है तो अपनी बात समझाने के लिये एक-दूसरे का प्रयोग किया जा सकता है। शाब्दिक छीछालेदर का काम विद्वानों पर छोड़ता हूँ।

मैं जिस परिसर में रहता हूँ, उस मुगलकालीन मुल्लाजी की सराय को 24 क्वार्टरों में परिवर्तित कर बनाया गया है। आकृति सराय जैसी चौकोर ही रखी गई है। सब परिवार एक दूसरे को जानते है एक जमाने में वातावरण परिवार का ही था। युवा वर्ग भाई-बहन बुजुर्ग चाचा ताऊ सर्वमान्य थे। लव का तत्व कल्पना में भी नहीं था। बात अब बदल गई है। 1959 से ए. जी. आफिस में कार्य के 12 वर्ष पश्चात् सैकण्ड हैन्ड लेम्ब्रेटा स्कूटर खरीदा था। परिसर के सबसे अधिक वाचाल महापुरुष ने पान की पीक थूक कर कहा-बेटा ! स्कूटर तो मैं भी अपने बच्चों को दिला सकता हूँ, पर इसलिये नहीं दिलाता कि ये फिर टायलेट जाएंगे तो भी स्कूटर पर ही जायेंगे। यही महानुभाव जब इनका सुपुत्र दो वर्ष तक हाई स्कूल नहीं पास कर पाया तो कहा करते थे तुम क्या जानो एलजेब्रा क्या होता है, ज्योमेट्री क्या होती है ? ए स्क्वायर, बी स्क्यावर करते हुए मर जाओगे पर पल्ले कुछ भी नहीं पड़ेगी। मैं उस समय सम्भवतः पाँचवी कक्षा का छात्र था। जब मैं प्रथम प्रयत्न में ही हाई स्कूल द्वितीय श्रेणी से पास हुआ तो कुछ लोगों ने अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की, गोद में उठा लिया और कुछ जल-भुन कर राख हो गए। जब मेरे कनिष्ठ भ्राता लव कुमार ने प्रान्त भर में सर्व द्वितीय स्थान पाया तो मुहल्ले के लोगों की समझ में ही नहीं आया कि सर्व द्वितीय कौन सी श्रेणी है। उनके लिये प्रथम श्रेणी ही अंतिम श्रेणी थी। जब मेरी भानजी सुषमा हायर सेकेन्डरी परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुई तो कहा गया-ये लोग 'जुगाड़ऑ लगा लेते है। **(क्रमशः)**

वेदवाणी
अभय ज्योति !

न दक्षिणा वि चिकिते न सव्या न प्राचीनमादित्या नोत पश्चा।
पाक्यचित् वसवो धीर्याचिद् युष्मानीतो अभयं ज्योतिरश्याम्।।

-ऋ. २।२७।११

ऋषिः-**कूर्मो गार्त्समदो गृत्समदो वा।।** देवता-**आदित्याः।।** छन्दः-**विराट्त्रिटुप्।।**

विनय-आजकल मैं एक अँधेरी रात्रि में घिरा हुआ हूँ। मेरे मानसिक नेत्रों के सामने एक ऐसा दुर्भेद्य काला पर्दा आ गया है, जिसने कि मेरा सम्पूर्ण प्रकाश रोक लिया है। अपनी वर्त्तमान आध्यात्मिक समस्या को हल करने में ही मैं दिन-रात डूबा हुआ हूँ ; कहीं से भी कोई प्रकाश की किरण मिलती नहीं दीखती। चारों ओर अन्धेरा-ही-अन्धेरा है-घोर घुप्प अन्धेरा है। दाएँ-बाएँ कहीं कुछ दृष्टि नहीं आता, आगे या पीछे कहीं भी इस अन्धकारमय उलझन से बाहर निकलने का रास्ता नहीं सूझता। क्या करूँ ? यह भयङ्कर रात्रि क्या कभी समाप्त भी होगी या नहीं ? इस अन्धे जीवन से तो मरना भला है। खाता-पीता, चलता-फिरता हुआ भी मैं आज मुर्दा हूँ। चौबीसों घण्टे विचारने में ग्रस्त हूँ, पागल हो रहा हूँ, प्रकाश पाने के लिए निरन्तर घोर युद्ध में लगा हुआ हूँ, पर इस काली रात्रि का कहीं अन्त होता नहीं दिखाई देता। हे देवो ! भगवान् के दिव्य प्रकाश का सन्देश लाने वाले हे उसके 'आदित्य' नामक दूतो ! मैं तुम्हें याद कर रहा हूँ, तुम्हारी राह देख रहा हूँ। तुम मुझे इस रात्रि से शीघ्र पार ले-चलो, नहीं तो अब मेरा जीना कठिन हो रहा है। सुना है कि बुद्ध, ईसा, दयानन्द आदि अनेक महात्मा अपना दिव्य प्रकाश पाने से पहले ऐसी अन्धेरी रात्रियों में से गुज़रे थे, परन्तु वे तो जन्म-जन्मान्तरों के पके हुए थे और बड़े धीर थे। मैं बिलकुल कच्चा, अपरिपक्व ज्ञान वाला और बड़ा दुर्बल, अधीर हूँ। मुझे इससे पार कौन ले-जाएगा ? किसी तरह भी हो, हे वासक आदित्यो ! तुम मुझे भी बसा लो, अन्धकार से निकाल मुझे मरने से बचा लो। मैं चाहे जितना अज्ञानी, कच्चा और धैर्यरहित होऊँ, पर यदि तुम मुझे ले-चलोगे-मेरे नायक बन जाओगे-तो मैं निः सन्देह अन्धकार को समाप्त कर प्रकाश को पा जाऊँगा और तब इस महाभय से पार हो जाऊँगा। मेरी यह भय की अवस्था उस ज्योति को पाकर ही मिटेगी। मुझे चाहिए वह अभय ज्योति ! हाँ, वह अभय ज्योति!!

स्व. आचार्य ऋषि कुमार आर्य के जन्मदिन पर यज्ञ का आयोजन

महर्षि दयानन्द मठ चम्बा हिमाचल प्रदेश में 5 अप्रैल 2017 को स्व. आचार्य ऋषि कुमार जी का जन्मदिवस मनाया जा रहा है। दयानन्द मठ चम्बा के अध्यक्ष आचार्य महावीर सिंह जी के सुपुत्र आचार्य ऋषि कुमार जी का दो वर्ष पूर्व छोटी आयु में देहान्त हो गया था। ऋषि कुमार जी महर्षि दयानन्द मठ चम्बा के उपाध्यक्ष थे और मठ के कार्यों में बढ़-चढ़ कर सहयोग देते थे। महर्षि दयानन्द मठ चम्बा को उन्नति के शिखर पर ले जाने में उनका प्रमुख योगदान है। श्री ऋषि कुमार जी अहर्निश स्वामी सुमेधानन्द जी के मार्गदर्शन में कार्य करते हुए मठ को नए आयाम देने में लगे हुए थे। परन्तु अकस्मात् वज्रपात हुआ और मठ का यह अमूल्य हीरा काल के गाल में समा गया। मठ के लिए यह एक भारी वज्रपात था जिसे सहन करना असम्भव था। परन्तु परमात्मा की अटल व्यवस्था को स्वीकार करते हुए उसकी इच्छा समझ कर इस असहनीय दुःख की स्थिति में धैर्य धारण करना पड़ा। दो वर्ष का समय बीत जाने पर भी ऐसा अहसास होता है कि आज भी ऋषि की आत्मा हमारे बीच में ही है। आर्य बन्धुओं! 5 अप्रैल को मठ परिवार की ओर से प्रिय पुत्र को हार्दिक श्रद्धांजलि देने के लिए यज्ञ का आयोजन किया गया है। आप सभी इस अवसर पर परिवार सहित पधार कर प्रिय ऋषि कुमार को अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करके मठ परिवार को अपना आशीर्वाद प्रदान करें तथा स्वामी सुमेधानन्द जी द्वारा प्रारम्भ किए हुए जनकल्याण के कार्यों को आगे बढ़ाने में अपना सहयोग देते रहें। आपके सहयोग और आशीर्वाद से ही महर्षि दयानन्द मठ चम्बा अपने जनकल्याण के कार्यों को गति प्रदान कर पाएगा। मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि आप सभी आर्य बन्धुओं का सहयोग पूर्ववत् मिलता रहेगा।

-आचार्य महावीर सिंह अध्यक्ष दयानन्द मठ चम्बा

पृष्ठ 2 का शेष-महामृत्युञ्जय-मन्त्रार्थविवेचनम्

इस यजन के करने से हम स्वतः ही संसार रूपी वृक्ष पर शनैः शनैः पकते जाएंगे अर्थात् परिपक्व अवस्था वार्धक्य को प्राप्त हो जाएंगे। हे सुन्दर गन्धदायक एवं पुष्टिकारक प्रभो ! हम आपकी उपासना करते हैं। आपकी उपासना से हम परिपक्व अवस्था को निर्विघ्न प्राप्त हों, पुष्टि से भी युक्त हों। इस पकी हुई अवस्था में शरीर को छोड़ना दुःखदायी नहीं अपितु स्वाभाविक और शान्तिदायक सिद्ध होगा। किसी को किसी प्रकार का दुःख न होगा। प्रभो ! हमें ऐसा परिपक्व और सुगन्धियुक्त कर दो कि हम मरते हुए भी आपकी अमृतमयी गोद से कभी अलग न हों।

महामृत्युञ्जय ! महारुद्र ! त्राहि मां शरणागतम्।

जन्म-मृत्यु-जरा-रोगैः पीड़ितं कर्मबन्धनैः।।

हे महामृत्युञ्जय ! हे मरारुद्ररूप परमेश्वर ! जन्म, मृत्यु तथा वार्धक्य आदि विविध रोगों एवं कर्मों के बन्धनों से पीड़ित मैं आपकी शरण में आया हूँ। आप मेरी रक्षा करें। मेरा उद्धार करें।

भगवान् ! आप त्र्यम्बक अर्थात् तीनों लोकों की आंख हैं। उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय के अधिद्रष्टा हैं। हमारी यथार्थ अवस्था-स्थिति से सम्यक् प्रकार परिचित हैं। अतः आप हमारा मृत्युमय से छुटकारा अवश्य करें, पर अपनी अमृतमयी गोद से कभी बिछड़ने न दें।

वस्तुतः पूर्ण परिपक्व अवस्था तक वही व्यक्ति पहुँच सकता है जिसमें पूर्णरूपेण शारीरिक क्षमता हो, स्वस्थ हो, मानसिक और बौद्धिक रूप से पूर्णतः समर्थ हो। निराशा, हताशा, आलस्य, प्रमाद का नामोनिशान न हो। परिस्थितियों के अनुकूल स्वयं को ढाल सके। आत्मविश्वास, उत्साह, साहस से परिपूर्ण हो। सकारात्मक सोच रखते हुए जीवन व्यतीत करे। दुष्टकर्मों, से दूर रहे। अपने आध्यात्मिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सतत प्रयत्नशील रहे, तभी की गई प्रार्थना सार्थक हो सकती है।

प्रार्थना की सार्थकता के लिए गीता में श्रीकृष्ण ने एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कही है-

प्रयाणकाले मनसाचलेन भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।

भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक् स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम।। 8/10

अन्तकाल में वह भक्तियुक्त पुरुषयोगबल से भृकुटी के मध्य में प्राण को अच्छी प्रकार स्थापन करके निश्चल मन से स्मरण करता हुआ उस दिव्यस्वरूप परम पुरुष परमात्मा को ही प्राप्त होता है।

कठोपनिषद् में भी मोक्ष = परमगति का स्वरूप स्पष्ट करते हुए कहा गया है-

यदा पन्नावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।

बुद्धिश्च न विचेष्टते तामाहुः परमां गतिम्।। 2/6/10

जब शुद्ध मनयुक्त पांच ज्ञानेन्द्रिय जीव के साथ रहती हैं और बुद्धि का निश्चय स्थिर होता है, उसको परम गति अर्थात् मोक्ष कहते हैं।

मोक्ष की प्राप्ति कब होगी ? इसका स्पष्टीकरण प्रस्तुत है-

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।

क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे।?

मुण्डक. 2/2/8

जब इस जीव की अविद्या-अज्ञानरूपी गांठ कट जाती है, सह संशय छिन्न हो जाते हैं और दुष्टकर्म क्षय को प्राप्त होते हैं, तभी उस परमात्मा में निवास करता है, जो कि अपने आत्मा के भीतर व्याप रहा है।

अतः मन, इन्द्रिय आदि को वश में रखते हुए दुष्टकर्म त्याग कर, बुद्धि को स्थिर करके, हम उस त्रयम्बक अर्थात् त्रिकालदर्शी परमात्मा का ही आश्रय लें। हमारे लिए यही श्रेयस्कर है।

एतदालम्बनं श्रेष्ठं एतदालम्बनं परम्।

एतदालम्बनं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।।

नव संवत्सर एवं आर्य समाज स्थापना दिवस मनाया

आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर में आर्य समाज स्थापना दिवस एवं नव संवत्सर का पर्व अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। कार्यक्रम के प्रारम्भ में यज्ञ हुआ जिसमें सभी श्रद्धालुओं ने तन्मय होकर अत्यन्त ही श्रद्धाभाव से आहुतियां प्रदान की। पं. कपिल वेदालंकार जी ने पवित्र वेदमन्त्रों के उच्चारण से नव संवत्सर एवं आर्य समाज स्थापना दिवस की महत्ता पर प्रकाश ड़ाला। उन्होंने कहा कि आज के दिन ही परमपिता परमात्मा ने इस विशाल ब्रह्माण्ड़ को रचा था। इसी दिन युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज की स्थापना की थी और देश में फैल रही कुरीतियों, पाखण्ड़ों एवं अन्धविश्वास को समाप्त करने का बीड़ा उठाया था। आर्य समाज के प्रधान श्री रणजीत आर्य ने समारोह में उपस्थित सभी श्रद्धालुओं को सम्बोधित करते हुए उन्हें नव संवत्सर एवं आर्य समाज स्थापना की शुभकामनाएं प्रदान की। उन्होंने कहा कि आज के दिन यदि परमेश्वर ने इस सृष्टि रूपी यज्ञ को सम्पन्न किया था तो आज के ही दिन उस अनादि ईश्वर के अनादि ज्ञान वेद का द्वार समस्त मानव जाति के लिए खोलते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य समाज के कारण ही आज हमारी सभ्यता और संस्कृति पुनर्जीवित है। आज हम प्रतिदिन संसार के सुख एवं कल्याण के लिए जहाँ अग्निहोत्र करते हैं वहीं वेद का पावन सन्देश भी जन-जन तक पहुंचाते हैं। इस अवसर पर आर्य समाज के महामन्त्री श्री हर्ष लखनपाल, श्री भूपेन्द्र उपाध्याय, श्री सुरेन्द्र अरोड़ा, श्री राजीव शर्मा, श्रीमती अनु आर्या, दिव्या आर्या, श्री सुभाष आर्य, श्री जितेन्द्र आर्य, श्री दर्शन आर्य, श्री पवन मल्होत्रा, हर्ष मैहता, पूनम मैहता, सोमांश अरोड़ा, सुकृति आर्या, विनय चावला, ललित मोहन कालिया, संगीता मल्होत्रा, समित भाटिया, कमलेश कुमार, विजयलक्ष्मी, अनिल मिश्रा, प्रिया मिश्रा, अर्चना मिश्रा, बैजनाथ, राजकुमार सेठ आदि उपस्थित थे।

आर्य समाज शहीद भगत सिंह नगर जालन्धर में नव संवत्सर एवं आर्य समाज समाज स्थापना दिवस के अवसर पर यज्ञ एवं सत्संग में उपस्थित आर्य समाज के अधिकारी एवं सदस्यगण।

हर्ष लखनपाल
महामन्त्री आर्य समाज

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट, रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे, मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताजगी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व थकान में अत्यंत उपयोगी।

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ट
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा गायत्री प्रिंटिंग प्रैस, मण्डी रोड जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।